**ओ३म्**

**“ईश्वरीय ज्ञान और सृष्टि के आरम्भ और बाद में उसकी आवश्यकता”**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 ईश्वरीय ज्ञान की चर्चा से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि ईश्वर क्या है वा ईश्वर किसे कहते हैं। ईश्वर एक सत्य-चित्त-आनन्द युक्त सत्ता का नाम है। यह सत्ता निराकार एवं सर्वव्यापक है। यह सर्वज्ञ है एवं इसी ने सत्व, रजस व तम गुणों वाली त्रिगुणात्मक सूक्ष्म प्रकृति से इस संसार की रचना की है। ईश्वर सर्वातिसूक्ष्म है। इसी कारण यह आंखों से नहीं ज्ञान युक्त बुद्धि से ही जाना जाता व दिखाई देता है। ईश्वर से सूक्ष्म संसार में कुछ भी नहीं है। ईश्वर का किसी भी बात में न आदि है और न अन्त। यह अनादि व अनन्त सत्ता है। इसके माता-पिता व भाई बन्धु भी कोई नहीं हैं। यह अनादि, नित्य व सनातन सत्ता है। अब ईश्वरीय ज्ञान की चर्चा करते हैं। ईश्वर चित्त वा चेतन स्वरूप है। चेतन का गुण ज्ञानवान या ज्ञान प्राप्त करने में समर्थ होना तथा बल व शक्तियुक्त होना व पुरुषार्थ करना है। ईश्वर में जो ज्ञान है उसे स्वाभाविक ज्ञान कह सकते हैं। उसके स्वभाव में अनादि काल से सर्वज्ञता है अर्थात् सभी विषयों का उसे पूर्ण ज्ञान है। स्वभाव से इतर नैमित्तिक ज्ञान होता है जो हम ज्ञानीजनों व पुस्तक आदि अथवा चिन्तन-मनन व प्रयोगों को करके सीखते हैं। ईश्वर सर्वज्ञ है और उसका यह ज्ञान भी अनादि व नित्य है। उसी से ईश्वर से इतर चेतन सत्ताओं, जीवात्माओं वा मनुष्यों को ज्ञान प्राप्त होता है। ईश्वर से ज्ञान प्राप्ति के दो स्रोत हैं जिनमे प्रथम **‘‘वेद”** हैं। दूसरा स्रोत ईश्वर की जीवात्मा के भीतर व बाहर उपस्थिति है अतः वह आत्मा में प्रेरणा द्वारा ज्ञान देता है। यह ज्ञान योगियों को ईश्वर व आत्म साक्षात्कार के अवसर पर यथोचित मात्रा में प्राप्त होता है। योगियों को यह ज्ञान समाधि अवस्था में प्राप्त होता है अर्थात् ईश्वर साक्षात्कार समाधि अवस्था में होता है। यह ज्ञान निर्भ्रान्त अर्थात् सभी प्रकार के भ्रमों व भ्रान्तियों से रहित होता है। ईश्वर से प्रथम जो ज्ञान **‘‘वेद”** के रूप में मिलता है वह सृष्टि के आरम्भ में मिलता है। यह ज्ञान मिलना अत्यन्त आवश्यक व अनिवार्य है। यदि ईश्वर ज्ञान न दें तो आदि काल में मनुष्यों को अपने कर्तव्य व अकर्तव्यों अर्थात् धर्म और अधर्म का बोध न होने से वह अच्छे व बुरे दोनों प्रकार के कर्म करेगा जिससे ईश्वर की कर्म-फल व्यवस्था बाधित होगी। इसका कारण यह है कि ईश्वर जब तक बतायेगा नहीं कि धर्म व अधर्म अथवा कर्तव्य व अकर्तव्य क्या हैं? तब तक जीवात्मा को बोध नहीं होगा, और जिसका बोध नहीं कराया गया उसे दण्ड देने का अधिकार ईश्वर को शायद नहीं हो सकता। अतः सृष्टि के आरम्भ में मनुष्यों को कर्तव्य व अकर्तव्य का बोध कराना ईश्वर का दायित्व वा कर्तव्य है। वह ऐसा करता भी है ओर उसने सृष्टि आरम्भ में अमैथुनी सृष्टि में उत्पन्न अग्नि, वायु, आदि और अंगिरा नामी चार ऋषियों को उनकी आत्माओं के भीतर वेद ज्ञान को प्रकट व प्रेरित किया था और उन्हें भाषा के ज्ञान सहित वेद मन्त्रों के अर्थों को भी बताया व स्थापित किया था। यहीं से वेदोपदेश, वेदाध्ययन, पठन-पाठन, सन्ध्या-हवन व पंच महायज्ञ आदि परम्परायें ऋषियों ने प्रवृत्त की थीं जो आज भी न्यूनाधिक चल रही हैं। जो वेदों की परम्पराओं का पालन करते हैं वह इस जीवन में उन्नति व सुख भोगते हैं और मृत्यु के बाद परलोक में भी उन्नति वा मोक्ष को प्राप्त होते हैं।

 वेद सृष्टि व अध्यात्म अर्थात् परा व अपरा विद्याओं का पूर्ण ज्ञान है। इसमें कमी व त्रुटि किसी प्रकार की नहीं है। योगी व आत्मदर्शी ऋषि जो आर्ष व्याकरण भी जानते हैं, वही वेदों के मन्त्रों के अर्थां व रहस्यों का दर्शन करते हैं। इतर अल्प ज्ञानी व आचरणहीन ज्ञानियों को भी वेद मन्त्रों के यथार्थ अर्थ विदित नहीं होते। यह ऐसा ही है जैसे कि धूल पड़े दर्पण में अपनी मुखाकृति साफ व स्वच्छ दिखाई नहीं देती। योगियों व ऋषियों का आत्मा वा हृदय स्वच्छ व पवित्र होता है अतः वह ईश्वर साक्षात्कार व आत्मदर्शन सहित ईश्वर से सत्य विद्याओं को प्राप्त करते हैं। सृष्टि के आरम्भ से महाभारत काल व उसके कुछ समय बाद तक हमारे देश में बहुतायत में ऋषि व योगी होते आयें हैं जो देश विदेश में वेद ज्ञान व तदाधारित धर्म का प्रचार करते थे। इसी कारण उनके समय में सारा संसार अविद्या से मुक्त था। समस्त संसार में एक ही वैदिक धर्म था। संसार के लोग उसी वैदिक धर्म का पालन करते थे। यही कारण है कि वेद की अनेक शिक्षायें पारसी, ईसाई व मुस्लिम मत में भी विद्यमान हैं। पारसी, अंग्रेजी, लैटिन, यूनानी व अरबी आदि भाषाओं में संस्कृत के शब्द पाये जाते हैं। यह इसी कारण से है।

 वर्तमान समय से लगभग 5000 वर्षों से कुछ अधिक वर्ष पूर्व महाभारत का महायुद्ध इस देश की धरती पर हुआ था। इसके विनाशकारी परिणाम हुए। बड़ी संख्या में क्षत्रिय व विद्वदजन वीरगति को प्राप्त हुए। शिक्षा, न्याय व अन्य सभी व्यवस्थायें कुप्रभावित हुईं जिससे देश में मुख्यतः विद्या के क्षेत्र में अन्धकार बढ़ गया। यह समय के साथ साथ बढ़ता ही रहा। विदेशों में भी धर्म प्रचार बाधित हुआ जिससे वहां भी अज्ञानान्धकार फैल गया। इस अज्ञान ने अन्धविश्वासों, पाखण्ड, स्वार्थ, मिथ्या परम्पराओं, जन्मना जातिवाद, मूर्तिपूजा, अवतारवाद, मृतक श्राद्ध, फलित ज्योतिष, छुआछूत, ऊंच-नीच की भावना, निर्बलों पर अन्याय व उनके शोषण को जन्म दिया जो बढ़ता ही गया। इन अज्ञान, अविद्या व अन्धविश्वासों के कारण ही देश गुलाम हुआ। पहले मुसलमानों ने गुलाम बनाया और बाद में अंग्रेजों ने अपनी कूटनीति व षडयन्त्रकारी नीतियों से। इस अविद्यान्धकार वाले युग को मध्यकाल के नाम से जाना जाता है। यह वह समय था जब सारी दुनियां में धर्म के क्षेत्र में अन्धकार छाया हुआ था। भारत और विदेशों में भी कुछ व्यक्ति ऐसे हुए जिन्होंने अपने अपने क्षेत्रों में अपनी अपनी ज्ञान व बुद्धि के अनुसार एकाधिक मतों का प्रवर्तित किया। आज भी यह प्रचलन में हैं। सब मतों का अध्ययन करने पर पाया जाता है कि यह सब विज्ञान व सदाचरण की वेद की शिक्षाओं व सन्ध्या, हवन, पंचमहायज्ञ, मातृ-पितृ यज्ञ के विधान सहित भूगोल, गणित व विज्ञान आदि से दूर व दूरतम हैं।

 वेद ज्ञान का महत्व क्या है? इसका महत्व यह है कि वेद ज्ञान पूर्ण ज्ञान है। वेद ज्ञान में किसी प्रकार की कमी नहीं है। ऋषि दयानन्द ने वेदों का सूक्ष्म एवं व्यापक अध्ययन कर कहा कि वेद सब विद्याओं का पुस्तक है। इसमें सांसारिक अथवा लौकिक ज्ञान भी है और आध्यात्मिक व पारलौकिक ज्ञान भी है। वेदों का ज्ञान पूर्ण सत्य है। इसी कारण से यह ईश्वर से प्राप्त होना सिद्ध होता है। वेदों में जन्म से मृत्यु पर्यन्त मनुष्यों के कर्तव्यों व संस्कारों के विधान व ज्ञान सहित ईश्वर, जीवात्मा व सृष्टि का भी ठीक ठीक विज्ञान सम्मत ज्ञान है। वेद ज्ञान को जानने व उसके अनुरूप आचरण करने से मनुष्य का अभ्युदय एवं निःश्रेयस वा मोक्ष की प्राप्ति होती है। यह लाभ संसार के किसी अन्य मत को मानने से प्राप्त नहीं होता। वहां जो बताया व कहा जाता है उसकी समीक्षा करने पर वह सत्य सिद्ध नहीं होता। उनके पास अपनी बातों को सिद्ध करने के लिए प्रमाणों का अभाव है जबकि वैदिक धर्मी अपनी प्रत्येक मान्यता की पुष्टि तर्क, युक्ति व प्रमाण से करता है। इसी कारण विपक्षी व विधर्मी आर्यसमाज के विद्वानों से शास्त्रार्थ करने से दूर भागते हैं। वेदों में जो ज्ञान है, वह यदि ईश्वर से प्राप्त न होता तो मनुष्य उसे उत्पन्न करने में समर्थ नहीं था। अतः सृष्टि के आरम्भ से ही समस्त सन्ततियां व पीढ़ियां अज्ञान से आवृत्त होकर दुःख न नरक में प्रविष्ट रहती। वेदों के ज्ञान के उपलब्ध होने से सृष्टि के आरम्भ से आज तक मनुष्य वेदानुकूल जीवन व्यतीत करते हुए योग व प्राणायाम आदि क्रियाओं व ओ३म् के जप आदि से ईश्वर की उपासना करते हुए ईश्वर का साक्षात्कार व अनुभव कर धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को प्राप्त हो रहे हैं। यह वेद व उसके अनुकूल ऋषियों के बनायें ग्रन्थों के कारण ही सम्भव हो पा रहा है। यही वेद का महत्व है। वेदों का कर्म-फल सिद्धान्त संसार में सर्वाधिक युक्ति एवं तर्कसंगत सिद्धान्त है। कर्म-फल सिद्धान्त का एक मुख्य सिद्धान्त है कि ईश्वर किसी जीव के किसी अच्छे व बुरे कर्म को किसी भी स्थिति में, किसी धर्मात्मा, आचार्य व विद्वान की सिफारिश या किसी मत विशेष का अनुयायी होने से, क्षमा नहीं करता। ईश्वर चाहे भी तो ऐसा नहीं कर सकता क्योंकि इससे नियम टूट जायेगा और यह सिद्धान्त भंग हो जायेगा। ऐसा न पहले कभी हुआ, न वर्तमान में होता है और न भविष्य में ही होगा। लेख को अधिक विस्तार न देकर इसे समाप्त करते हुए निवेदन है कि सभी बुद्धिमान लोगों को वेदों की शरण में आना चाहिये। वेदाध्ययन की पहली सीढ़ी सत्यार्थप्रकाश है, इसका अध्ययन करें। यह पूर्ण धर्म ग्रन्थ भी है। इसके बाद आप वैदिक साहित्य के अन्य अधिकाधिक ग्रन्थ पढ़े। आपको लाभ होगा।

**भरोसा कर तू ईश्वर पर तुझे धोखा नहीं होगा।**

**यह जीवन बीत जायेगा तुझे रोना नहीं होगा।।**

ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**